Universe Journal of Education & Humanities ISSN 2348-3067
Volume-I, No. I, Feb.-2014, pp. 69-79

अध्यापक शिक्षा द्वारा उच्च शिक्षा का अन्तर्राष्ट्रीयकरण

बलवीर सिंह
प्रवक्ता अर्थशास्त्र विभाग
एल.डी.ए.वी. इन्टर कालिज अनूपशहर बुलन्दशहर उ.प्र. भारत।

सारांश

भावात्मक एवं राष्ट्रीय एकता का सशक्त साधन शिक्षा है। इसके लिए शिक्षा के क्षेत्र में अनेक परिवर्तन करने होगें। जहाँ तक शिक्षा के उद्देश्य, पाठ्यचर्या, पाठ्य पुस्तकें, रेडियों और टेलिविजन प्रसारण, राष्ट्रीय स्तर पर शिक्षकों के स्थानान्तरण और छात्रों को अध्ययन की सुविधा प्रदान करने की बात है। इन सब कार्यो के लिए शिक्षकों का उत्तरदायित्व सबसे अधिक है, क्योंकि वे छात्रों के अधिक सम्पर्क में आते है। शिक्षकों के लिए आवश्यक है कि राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय भावना हो वे राष्ट्रहित के आगे व्यक्तिगत एवं सामूहिक हितों का त्याग करें, शिक्षकों के इस आचरण की छाप बच्चों पर पड़ेगी। समाज सेवा एवं राष्ट्र सेवा शिक्षकों का धर्म होना चाहिए, उन्हें अपने इस कर्तव्य का पालन पूर्णनिष्ठा, लगन एवं ईमानदारी से करना चाहिए। तभी वे वास्तव में शिक्षा के माध्यम से राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय एकता का विकास करने में पूर्णरूपेण समर्थ हो सकेगें। इसमें अभिभावकों का भी सहयोग अपेक्षित है।

भारत में उच्च शिक्षा का स्वरूप

उच्च शिक्षा का सामान्य अर्थ हुआ ऊँची–ऊँची शिक्षा, श्रेष्ठ शिक्षा, ऐसी शिक्षा जो सामान्य शिक्षा से ऊँचे स्तर की हो। अंग्रेजी में इसे हायर एजुकेशन कहते है, जिसका अर्थ है, उससे ऊँची शिक्षा अर्थात् समान्य शिक्षा से ऊँची शिक्षा। हमारे देश में उच्च शिक्षा की शुरूआत वैदिककाल में हो चुकी थी। तब उच्च शिक्षा से तात्पर्य प्राथमिक शिक्षा के बाद गुरूकुलीय शिक्षा से था। इसकी अवधि सामान्यतः 12 वर्ष की थी। बौद्धकाल में भी उच्च शिक्षा से तात्पर्य प्राथमिक शिक्षा की बाद की शिक्षा से था और इसकी अवधि भी सामान्यतः 12 वर्ष की थी, किन्तु इसका पाठ्यक्रम वैदिक कालीन उच्च शिक्षा के पाठ्यक्रम की अपेक्षा अधिक विस्तृत था। मुस्लिम काल में मुस्लिम शिक्षा प्रणाली का विकास हुआ, जिसमें भी प्राथमिक शिक्षा के बाद की शिक्षा को उच्च शिक्षा कहा जाता था, परन्तु इसकी अवधि 8 वर्ष की थी तथा इसका पाठ्यक्रम भी भिन्न था।

भारत में आधुनिक उच्च शिक्षा का श्रीगणेश यूरोपीय ईसाई मिशनरियों द्वारा हुआ। इस देश में सर्वप्रथम 1510 पुर्तगाली ईसाई मिशनरियों का प्रवेश हुआ। उन्होनें प्राथमिक शिक्षा के साथ–साथ, गोआ, कोचीन, चाल और बाँन्द्रा में कुछ उच्च शिक्षा संस्थाओं की स्थापना भी की इन कॉलेजों में लैटिन पुर्तगाली व्याकरण, संगीत तथा तर्क शास्त्र की शिक्षा दी जाती थी। इन कॉलेजों में चॉल का जेसट कॉलेज (Jesuit college) और बाँन्द्रा का सैंट एनीकॉलेज (St. Anne college) मुख्य थे, इनका स्वरूप आधुनिक उच्च शिक्षा से काफी भिन्न था। सही माने में भारत में आधुनिक उच्च शिक्षा का शुभारम्भ ईस्ट इंडिया कम्पनी ने किया

उच्च शिक्षा का अवश्यकता एवं महत्व

उच्च शिक्षा का वास्तविक अर्थ है – उच्च प्रतिभा के व्यक्तियों की उच्च शिक्षा, विशिष्ट शिक्षा, एक ऐसी शिक्षा जिसके द्वारा समाज अथवा राष्ट्र के विभिन्न क्षेत्रों के लिए विशेषज्ञ तैयार किये जाते है। तब इसका महत्व एवं आवश्यकता स्वतः सिद्ध हो जाती है। उच्च शिक्षा के महत्व को हम निम्नलिखित रूप में देख सकते है उच्च ज्ञान की प्राप्ति, नये ज्ञान की खोज एवं सत्य की पहचान, विशेषज्ञों का निर्माण, कार्यकुशलता एवं नेतृत्व का विकास, युवकों में विस्तृत दृष्टिकोण का विकास, राष्ट्र का बहुमुखी विकास,

भारत में उच्च शिक्षा का उद्देश्य

भारत में विभिन्न स्तरों की शिक्षा के उद्देश्य निश्चित करने का कार्य सर्वप्रथम वुड के घोषणा पत्र, 1854 में किया गया। इसके बाद भारत में जो भी आयोग गठित हुए सभी ने

विभिन्न स्तरों की शिक्षा के उद्देश्य स्पष्ट करने का कार्य जारी रखा। 1948–49 में भारत सरकार ने डा. सर्वपल्ली राधाकृष्णन आयोग का गठन किया।

इसके अनुसार उच्च शिक्षा के उद्देश्य निम्नलिखित है –

- ऐसे व्यक्तियों का निर्माण करना जो शारीरिक दृष्टि से स्वस्थ एवं मानसिक दृष्टि से प्रबुद्ध हो।
- व्यक्तियों का अनुवंशिक गुणों को ज्ञात कर उनका विकास करना।
- ऐसे व्यक्तियों का निर्माण करना जो राजनीतिक, प्रशासन, व्यवसाय, उद्योग व वाणिज्य के क्षेत्र में नेतृत्व कर सकें।
- ऐसे व्यक्तियों का निर्माण करना जो दूरदर्शी, बुद्धिमान एवं बौद्धिक दृष्टि से श्रेष्ठ हों तथा समाजसुधार के कार्यो में सहयोग दे सकें।
- ऐसे नवयुवकों का निर्माण करना, जो अपनी साँस्कृतिक विरासत का संरक्षण करें तथा उसमें अपना महत्वपूर्ण योगदान दे सकें।
- विद्यार्थियों को चरित्र निर्माण करना।
- विद्यार्थियों में प्रजातान्त्रिक मूल्यों – समानता, स्वतन्त्रता, भ्रातृत्व और न्याय का संरक्षण एवं सवर्ध्दन करना।
- विद्यार्थियों में विश्वबन्धुत्व एवं अन्तर्राष्ट्रीय सद्भावना का विकास करना।
- विद्यार्थियों में आध्यात्मिक शक्ति का विकास करना।

कोठारी आयोग सन् 1964–66 ने उसके द्वारा प्रतिपादित उद्देश्य को अपेक्षाकृत कुछ संक्षिप्त रूप में व्यक्त किया। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 में उच्च शिक्षा के उद्देश्यों के विषय में कहा गया है कि उच्च शिक्षा, उच्च ज्ञान की प्राप्ति, नवीन ज्ञान की खोज, राष्ट्र के विभिन्न क्षेत्रों के लिए विशेषज्ञों की तैयारी युवको में विस्तृत दृष्टिकोण के विकास तथा राष्ट्र के बहुमुखी विकास का साधन है। वर्तमान में भारत में उच्च शिक्षा के यही उद्देश्य है। इन उद्देश्यों को यहां हम क्रमबद्ध रूप में निम्न प्रकार देख सकते है –

- युवकों को उच्च ज्ञान की प्राप्ति कराना ओर उन्हें नये ज्ञान की खोज करने तथा सत्य की पहचान करने योग्य बनाना।
- राष्ट्र के विभिन्न क्षेत्रों के लिए विशेषज्ञों – प्रशासक, संगठनकर्ता, चिकित्सक, वकील, वैज्ञानिक, इंजीनियर, और तकनीशियन आदि का निर्माण करना।
- युवकों में जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में कार्य करने की कुशलता तथा नेतृत्व प्रदान करने की क्षमता का विकास करना।
- युवकों में विस्तृत दृष्टिकोण – सामाजिक समानता, साँस्कृतिक एवं धार्मिक सहिष्णुता एवं अन्तर्राष्ट्रीय अवबोध का विकास करना।
- युवकों को राष्ट्र के बहुमुखी विकास के लिए तैयार करना।

भारत में उच्च शिक्षा का पाठ्यक्रम

भारत में उच्च शिक्षा का श्री गणेश वैदिक काल में हो चुका था, परन्तु अंग्रेजों के पदार्पण से पूर्व इसका, पाठ्यक्रम भाषा, साहित्य, धर्म, दर्शन, तर्कशास्त्र, आयुर्विज्ञान तथा विभिन्न कला–कौशलों के शिक्षण प्रशिक्षण तक सीमित था। इसमें यूरोपीय ज्ञान–विज्ञान को सम्मिलित करने की घोषणा सर्वप्रथम वुड के घोषणा पत्र 1854 में की गई। इसके बाद भारतीय शिक्षा आयोग 1882 तथा कलकत्ता विश्वविद्यालय आयोग 1917 ने इसे और विस्तृत करने की सिफारिश की। परिणामतः देश में उच्च शिक्षा में कानून, युरोपीय चिकित्सा पद्धति तथा इंजिनियरिंग आदि पाठ्यक्रम शुरू हुए।

विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग 1948–49 ने उच्च शिक्षा के पाठ्यक्रम के सम्बन्ध में निम्नलिखित सुझाव प्रस्तुत किये –

- स्नातक पाठ्यक्रम तीन वर्ष का किया जाये।
- स्नातक स्तर पर सभी–विषयों का पाठ्यक्रम विस्तृत किया जाये।

- स्नातक स्तर पर राष्ट्र भाषा हिन्दी, अंग्रेजी, सामान्य शिक्षा तथा धार्मिक शिक्षा को अनिवार्य किया जाये।
- स्नातकोत्तर स्तर पर केवल किसी एक विषय का गहन अध्ययन कराया जाये।
- वैज्ञानिक, व्यवसायिक तथा तकनीकी विषयों के पाठ्यक्रम को विस्तृत एवं आधुनिक बनाया जाये।

अन्तर्राष्ट्रीय अवबोध का अर्थ है संसार के विभिन्न राष्ट्रों के बीच समझ एवं सद्भाव। समझ से तात्पर्य है कि सभी राष्ट्र अन्य राष्ट्रो की संस्कृति, ज्ञान–विज्ञान तथा अन्य क्षेत्रों की जानकारी रखेगें तथा सद्भाव का अर्थ है कि सभी राष्ट्र अन्य राष्ट्रो की संस्कृति के प्रति उदार दृष्टिकोण रखेगें, ज्ञान–विज्ञान के क्षेत्र में आदान–प्रदान करेगें और विकसित राष्ट्र पिछड़े तथा विकासशील राष्ट्रों के विकास में सहयोग प्रदान करेगें, परन्तु कुछ लोग अन्तर्राष्ट्रीयता का अर्थ कुछ दूसरे रूप में लेते है। उनके अनुसार अन्तर्राष्ट्रीयता वह भावना है जो मनुष्य का राष्ट्र की सीमा से निकाल कर विश्व राष्ट्र का नागरिक बनाती हैं। अन्तर्राष्ट्रीयता एक भावना है जिसके अनुसार व्यक्ति केवल अपने राष्ट्र का ही सदस्य नही होता अपितु वह विश्व का नागरिक भी होता है। इसका अर्थ है कि राष्ट्रों के ऊॅपर एक विश्व राष्ट्र है और सभी व्यक्ति अपने–अपने राष्ट्रों के साथ–साथ इस विश्व राष्ट्र के भी नागरिक हैं। वास्तविकता यह है कि अन्तर्राष्ट्रीयता की भावना विश्व राष्ट्र का सृजन नही करती अपितु वह संसार के सभी राष्ट्रों के स्वतन्त्र अस्तित्व में विश्वास करती है। यह एक राजनैतिक सम्प्रत्यय है, जो निम्नलिखित मूलभूत सिद्धान्तों पर आधारित है शांतिूपर्ण सह अस्तित्व, सहयोग, आन्तरिक मामलों में अनहस्तक्षेप, अनाक्रमण एवं शांतिपूर्ण ढ़ग से समस्याओं को समाधान।

वर्तमान युग में अन्तर्राष्ट्रीय अवबोध की आवश्यकता

हमारे देश भारत में आज से सहसत्रों वर्ष पूर्व "वसुधैव कुटुम्बकम" का उपदेश दिया गया था। इसमें संसार भर के मनुष्यों के कल्याण की भावना निहित है, किन्तु जिस अन्तर्राष्ट्रीयता की बात हम आज करते है, यह इसी युग की देन है। "वसुधैव कुटुम्बकम" वैदिक धर्म का सिद्धान्त है। अन्तर्राष्ट्रीयता वर्तमान युग की राजनैतिक आवश्यकता है। सन् 1912 में सर्वप्रथम अमेरिका के तत्कालीन राष्ट्रपति श्री टाफ्ट महोदय का ध्यान अन्तर्राष्ट्रीयता की ओर प्रथम विश्व युद्ध से बचने के उद्देश्य से प्रयास किया था किन्तु उन्हे इस उद्देश्य की पूर्ति में सफलता नही प्राप्त हो सकी। इसके 12 वर्ष बाद 1924 में (यूनाईटेड नेशन ओर्गनाजेशन यू0एन0ओ0) की स्थापना हुई किन्तु यह संस्था भी द्वितीय विश्व युद्ध को रोकने में असफल रही। इस समय विश्व एक नये दौर से गुजर रहा है। इसे भावी राजनैतिक आपदाओं से बचाने के लिए आज अन्तर्राष्ट्रीयता अवबोध की आवश्यकता है। इस सम्बन्ध में विस्तृत जानकारी हेतु निम्नांकित बिन्दुओं पर दृष्टिपात करना समीचीन होगा– राष्ट्रों के स्वतन्त्र आस्तित्व की रक्षा हेतु, युद्धों की समाप्ति हेतु, भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु, अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार हेतु, पिछडे राष्ट्रों के विकास हेतु एवंमनुष्य मात्र के कल्याण हेतु।

अन्तर्राष्ट्रीयता के विकास में बाधक तत्व

आज विश्व के सभी राष्ट्र अन्तर्राष्ट्रीयता की आवश्यकता अनुभव कर रहे है, तदनुरूप अविकसित एवं विकासशील राष्ट्र विकास हेतु प्रयत्न भी कर रहे है, किन्तु किन्हीं कारणावेश सफलता नही प्राप्त कर पा रहे
है। वे कारण निम्नलिखित है–संर्कीण राष्ट्रीयता, विभिन्न राजनैतिक चिन्तन धारा में, विभिन्न राष्ट्र गुट एवं राष्ट्रों की सांस्कृतिक भिन्नता।

अन्तर्राष्ट्रीयता का विकास

अन्तर्राष्ट्रीयता की आवश्यकता व विकास पर काफी पूर्व में भी विचार किया जा चुका है। 1912 में विश्व युद्ध से बचने के लिए अमेरिका के तत्कालीन राष्ट्रपति श्री टाफ्ट महोदय ने हेग में अन्तर्राष्ट्रीय कान्फ्रैस बुलाने का प्रयत्न

किया था, किन्तु वे इसमें सफल नही हुए और 1914 में प्रथम विश्व युद्ध हुआ। इस विश्व युद्ध के बाद अन्तर्राष्ट्रीयता की आवश्यकता की और अधिक ध्यान गया। संयुक्त राष्ट्रसंघ (यू0एन0ओ0) की स्थापना इसी उद्देश्य की प्राप्ति के लिए की गई थी। संयुक्त राष्ट्रसंघ, सहअस्तित्व, सहयोग, आन्तरिक मामलों में अनहस्तक्षेप, अनाक्रमण तथा शांतिपूर्ण ढ़ग से समाधन का पोषक है। इसमें एक विभाग है –संयुक्त राष्ट्र शैक्षिक, वैज्ञानिक एवं सांस्कृतिक संस्था (यूनेस्कों) इस संस्था का मुख्य कार्य अन्तर्राष्ट्रीयता का विकास ही है। अन्तर्राष्ट्रीयता भावना के विकास में यूनेस्कों के कार्य अत्यन्त महत्वपूर्ण है। संयुक्त राष्ट्रसंघ का यह विभाग अन्तर्राष्ट्रीयता स्तर पर शिक्षा की व्यवस्था करता है और शिक्षा द्वारा देश–विदेश के बच्चों में अन्तर्राष्ट्रीय भावना का विकास करने के लिए प्रयत्नशील है। द्वितीय महायुद्ध से पीड़ित देशों तथा अन्य पिछडे देशों की शिक्षा व्यवस्था में यूनेस्को विशेष हाथ बंटा रहा है। यह संसार से निरक्षरता और अज्ञानता को दूर करने के प्रयत्न में है और इस प्रकार संसार में प्रत्येक व्यक्ति को शिक्षित कर उसे व्यापक दृष्टिकोण प्रदान करने का प्रयास कर रहा है। यह शिक्षकों के आदान प्रदान, देश विदेश के पर्यटन और सांस्कृतिक कार्यक्रमों के आयोजन द्वारा भिन्न–भिन्न राष्ट्रों के व्यक्तियों को एक दूसरे के निकट लाने का प्रयास कर रहा है। इस प्रकार यूनेस्को शिक्षा, विज्ञान एवं संस्कृति के आदान–प्रदान में विश्वास करता है और इस क्षेत्र में विशेष रूप से सक्रिय है। हमें उसके कार्यो को गतिशील बनाने में सहयोग करना चाहिए।

शिक्षा और अन्तर्राष्ट्रीय समझ

शिक्षा अन्तर्राष्ट्रीयता के विकास का मूल साधन है। शिक्षा द्वारा अन्तर्राष्ट्रीयता का विकास करने के लिए
निम्नलिखित प्रयास करने होगें –

⇨ संकुचित राष्ट्रीयता को रोकना।

⇨ अन्तर्राष्ट्रीयता का विकास।

संकुचित राष्ट्रीयता के विकास को रोकने के उपाय

संकुचित राष्ट्रीयता के विकास को रोकने के लिए हमें राष्ट्रभाषा और राष्ट्रधर्म का विकास करते समय अपने दृष्टिकोण को थोड़ा विस्तृत करना होगा और बच्चों को राष्ट्रभाषा एवं राष्ट्रधर्म की शिक्षा देते समय दूसरें देशों की भाषा, संस्कृति और धर्म से भी परिचित कराना होगा और उन्हें अपनी भाषा और धर्म के साथ–साथ दूसरों की भाषा तथा धर्म के सम्मान देने की ओर अग्रसर करना होगा। उसी स्थिति में राष्ट्रों के बीच का
तनाव समाप्त हो सकता है।

राष्ट्रध्वज के सम्मान के साथ–साथ बच्चे दूसरे राष्ट्रों के ध्वजों को भी सम्मान दें, इसके लिए देश में अन्तर्राष्ट्रीय दिवस मनाने चाहिए। इस स्तर के उत्सव मनाते समय बच्चे भिन्न–भिन्न देश के ध्वजों को सम्मान देने के अवसर प्राप्त करते है और इस प्रकार उनमें संर्कीण राष्ट्रीयता के विकसित होने के अवसर अपेक्षाकृत कम रह जाते है।

अन्तर्राष्ट्रीयता के विकास के उपाय

अन्तर्राष्ट्रीयता की शिक्षा के लिए हमें वर्तमान शिक्षा के उद्देश्य, उसकी पाठ्यचर्या, शिक्षण विधियों एवं अन्य शैक्षिणक कार्यक्रमों में थोड़ा परिवर्तन करना होगा। इस सम्बन्ध में निम्नलिखित बिन्दु दृष्टव्य हैं

शिक्षा के उद्देश्यों में एक उद्देश्य

अन्तर्राष्ट्रीयता के विकास के लिए यह आवश्यक है कि शिक्षा के उद्देश्य व्यापक हों। आज शिक्षा का उद्देश्य बच्चों का शारीरिक, मानसिक, सामाजित, सांस्कृतिक, नैतिक एंव चारित्रिक तथा व्यावसायिक विकास करने के साथ–साथ राष्ट्रीयएकता और अन्तर्राष्ट्रीयता का विकास करना भी होना चाहिए।

शिक्षा की पाठ्यचर्या में सुधार

उद्देश्यों के अनुरूप ही पाठ्यचर्या का निर्माण होना चाहिए। अन्तर्राष्ट्रीयता के विकास के लिए पाठ्यचर्या को थोड़ा विस्तृत करना होगा। भूगोल, इतिहास और अन्य सामाजिक

विषयों में देश निदेश की भौगोलिक परिस्थितियों में देश विदेश के इतिहास और देश विदेश के रहन सहन, खान पान और उनकी संस्कृतियों का समावेश करना होगा। अन्तर्राष्ट्रीयता महत्व की संस्थाओं और संगठनों के विषय में भी बच्चों को बताना आवश्यक है। अतः इन्हें भी पाठ्यचर्या में शामिल किया जाना चाहिए। इस सबके साथ–साथ उसमें अन्तर्राष्ट्रीय स्तर की सह पाठ्यचारी क्रियाओं को भी स्थान देना होगा। अन्तर्राष्ट्रीय दिवसों का मनाना, अन्तर्राष्ट्रीय नेताओं के जन्म दिन मनाना, अन्तर्राष्ट्रीय विषयों पर वाद विवाद कराना और देश विदेश की सभ्यता एवं संस्कृतियों पर आधारित सांस्कृतिक कार्यक्रमों का आयोजन करना।

शिक्षण विधियों में सुधार

अन्तर्राष्ट्रीयता के विकास के लिए बच्चों में स्वतन्त्र चिन्तन, स्वतन्त्र अभिव्यक्ति, आत्मविश्वास और विस्तृत दृष्टिकोण का होना आवश्यक है और इस सब का विकास उचित शिक्षण विधियों द्वारा ही किया जा सकता है। इसके लिए उन शिक्षण विधियों को विशेष रूप से अपनाना चाहिए जिनमें बच्चों को स्वयं करके स्वयं के अनुभव से सीखने के अवसर मिलते है और बच्चे सामूहिक रूप से एक दूसरे के सहयोग से समस्त क्रियाओं का सम्पादन करते है।

पाठ्य पुस्तकों में सुधार

भाषा की पाठ्य पुस्तकों में आवश्यक संशोधन किया जाये। उनमें से ऐसी विषय सामग्री निकाल देनी चाहिए, जिससे संकीर्ण राष्ट्रीयता को बढावा मिलता है। उनमें अन्तर्राष्ट्रीय स्तर के नेताओं के जीवन चरित्र एवं घटनाओं आदि का समावेश करना चाहिए। देश विदेश की प्राकृतिक स्थिति और सभ्यता एवं संस्कृति से सम्बन्धित सामग्री का चुनाव भी किया जाना चाहिए।

अन्तर्राष्ट्रीय दिवस

सहपाठ्यचारी क्रियाओं के अन्तर्गत अन्तर्राष्ट्रीय दिवस मनाए जायॅ। प्रत्येक विद्यालय में संसार के सभी राष्ट्रों के झण्डें फहराने चाहिए और अपने राष्ट्र की राष्ट्रधुन बजानी चाहिए। प्रातःकालीन सामूहिक सभा में 10 मिनट का समय उस दिन इस कार्य के लिये दिया जाना चाहिए।

अन्तर्राष्ट्रीय खेलकूद

अन्तर्राष्ट्रीयता के विकास के लिए अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर खुलकूदों का आयोजन भी करना चाहिए। यूॅ तो व्यवहारिक रूप से यह देखा जाता है कि इस स्तर की प्रतियोगिताओं में जब कोई देश जीतता अथवा हारता है तो पूरे देश में खुशी अथवा शोक मनाया जाता है और इस हार जीत के फैसले को प्रत्येक नागरिक राष्ट्रीय भावना से देखता है, परन्तु यह तो दो भाईयों के बीच होने वाले खेल में भी होता है, इससे दूर्भावना नही, प्रतिस्पर्धा बढती है। इस भावना से ही तो राष्ट्र तरक्की करते हैं।

अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर सांस्कृतिक कार्यक्रम

अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर युवक समारोह मनाए जाने चाहिए और इनमें सब देशों को अपने–अपने देश की सांस्कृतिक झॉकियॉ प्रस्तुत करनी चाहिए। इससे बच्चे देश विदेश की संस्कृतियों से परिचित होते है, वे उनका आदर करने लगते है और उनमें अन्तर्राष्ट्रीयता का विकास होता है।

अन्तर्राष्ट्रीय प्रदर्शनियॉ

अन्तर्राष्ट्रीयता के विकास में इस प्रकार की प्रदर्शनियॉ बहुत सहायक हो सकती है, जैसे वेश–भूषा, चित्रकारी, शिल्प, साहित्य, पाठ्य पुस्तके, कुटीर उद्योग, बडे उद्योग, वैज्ञानिक आविष्कार आदि की प्रदर्शनियॉ। छोटे–छोटे बच्चे देश विदेश के बने खिलौने में बडी रूचि लेते है, अतः उनके लिए उनकी प्रर्दशनी लगनी चाहिए। इनके माध्यम से बच्चे विश्व के भिन्न–भिन्न देशों की सभ्यता एवं संस्कृति से परिचित होते है तथा यह सब उनकी ज्ञान परिधि में प्रविष्ट हो जाता है।

रेडियो और टेलिविजनों पर अन्तर्राष्ट्रीय कार्यक्रम

अन्तर्राष्ट्रीयता के विकास में स्कूल के समय और उसके बाद भी रेडियो एवं टेलिविजनों पर

अन्तर्राष्ट्रीय भावना के विकास में सहयोगी कार्यक्रमों का प्रसारण करना चाहिए। हमें बडी प्रसन्नता है कि हमारी सरकार इस ओर प्रयत्नशीन है। अन्तर्राष्ट्रीयता के विकास में समाचार पत्र और पत्रिकांए भी बडा सहयोग दे सकती है। हमें अपने विद्यालयों के पुस्तकालयों के अन्तर्राष्ट्रीय महत्व का साहित्य मंगवाना चाहिए।

अन्तर्राष्ट्रीय मित्र

इस सम्बन्ध में यह भी सुझाव है कि बच्चे पत्र व्यवहार द्वारा विदेशों में अपने मित्र बनाएँ जब समय–समय पर एक दूसरें के शुभ की कामना करेगें तो उनमें एक दूसरे के प्रति सद्भावना का विकास होगा ही तथा अन्तर्राष्ट्रीयता के विकास के लिए सद्भावना आवश्यक है।

अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर शिक्षकों का आदान–प्रदान

इस भावना के विकास के लिए अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर शिक्षकों का आदान–प्रदान होना चाहिए। यह कार्य कम से कम विश्वविद्यालय स्तर पर तो किया ही जा सकता है। जब एक देश के शिक्षक दूसरे देश में जायेगें तो उनके द्वारा देश विदेश की संस्कृतियों का प्रसार होगा तथा बच्चों को विश्व की सही तस्वीर मिलेगीं।

अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर छात्रों के अध्ययन की व्यवस्था

एक देश के छात्र दूसरे देश में जाकर अध्यन्न कर सके, इसकी आवश्यकता भी आज अनुभव की जा रही हैं जो छात्र दूसरे देशों में जाकर अध्ययन करते है उनके ह्रदय में उन देशों के लिए उतना ही प्यार हो जाता है, जितना अपने देश के लिए। यह कार्य बडे पैमाने पर तो सम्भव नही पर मेधावी छात्रों के लिए इसकी सहुलियतें और बढाई जा सकती है।

विदेश भ्रमण

कूपमंडूकता से छुटकारा पाने का एक ही उपाय है और यह है कूप से बाहर निकलना। राष्ट्रीय संकीर्णता से छुटकारा पाने के लिए संसार दर्शन आवश्यक है। यद्यपि हम सब विद्यालयों को यह सुविधा नही दे सकते, किन्तु यदि कुछ ही छात्र इसका लाभ उठा सके तो ठीक है। उनसे अन्य छात्र सुनकर ही लाभ उठा सकते है। देश विदेश के दर्शन से संसार की एकता की अनुभूति सहज में ही होती है, हमें इसके लिए प्रयास करना चाहिए।

विभिन्न राष्ट्रों में अध्यापक शिक्षा का स्वरूप

अध्यापक शिक्षा के स्वरूप का अध्ययन यदि विभिन्न विकासशील और विकसित राष्ट्रों के सन्दर्भ में किया जाये, तो एक तुलनात्मक स्वरूप का बोध हो पाता है। इससे भारतीय अध्यापक शिक्षा प्रणाली में अपेक्षित सुधार करने के लिए सफल प्रयास कर पाना सम्भव हो सकता है, कई ऐसी समस्यायें हो सकती है, जिनके समाधान को अन्य राष्ट्रीय परिदृश्य में खोज पाना सम्भव हो सकता है। भारतीय अध्यापक शिक्षा के स्तर को अन्तर्राष्ट्रीय स्तर तक पहुॅचाने के लिए योजना का निर्माण करने के लिए भी अन्य राष्ट्रों में प्रचलित अध्यापक शिक्षा प्रारूप के ज्ञान का समुचित ढंग से उपयोग कर पाना सम्भव हो सकता है। भारतीय दार्शनिक, सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक और साँस्कृतिक आधारों की तुलना अन्य राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा प्रणाली से करते हुए विकास हेतु औपचारिक, अनौपचारिक शैक्षिक साधनों का समुचित ढंग से उपयोग किया जा सकता है। अध्यापक शिक्षा के क्षेत्र में अनेकानेक सिद्धान्त, प्रतिमान तथा संकल्पनाओं को निर्मित करने की दिशा में भी तुलनात्मक स्वरूप का ज्ञान सहायक सिद्ध हो सकता है। यही कारण है कि विभिन्न राष्ट्रों में अध्यापक शिक्षा के स्वरूप को जानना एवं समझना अत्यन्त आवश्यक है। इसी क्रम में यहॉ कुछ प्रमुख राष्ट्रों के अध्यापक शिक्षा प्रणाली के सम्बन्ध में विचार प्रस्तुत किये जा रहे है –

ग्रेट ब्रिटेन में अध्यापक शिक्षा

ग्रेट ब्रिटेन में शिक्षा कानून (एक्ट 1944) के पारित होने के पहले अध्यापक शिक्षा की व्यवस्था सुनियोजित न थी, क्योंकि शिक्षकों के लिए यह किसी भी रूप में अपरिहार्य नही रहा। वैसे आज भी इस देश में

अध्यापक/अध्यापिकाओं के लिए अध्यापक शिक्षा की अनिवार्यता तो नही है, लेकिन पहले से ही स्वतन्त्र रूप में इसका अध्ययन–अध्यापन चलता रहा। शिक्षा संस्थान, लन्दन के द्वारा राष्ट्रीय आधार पर इस देश में अध्यापक शिक्षा सम्बन्धी कार्यक्रमों का संचालन किया जाता है एवं अन्य अध्यापक शिक्षा संस्थान इसके अधीन कार्य करते है।

अध्यापक शिक्षा के उद्देश्य

शिक्षण के सम्बन्ध में सैद्धान्तिक विकासभावी छात्राध्यापक/छात्राध्यापिकाओं में करते हुए निम्नलिखित उद्देश्यों को प्रस्तुत किया गया है –

- शैक्षिक, दार्शनिक, समाजशास्त्रीय, मनोवैज्ञानिक एवं आर्थिक आधार के बारे में विशेष जानकारी प्रदान करना।
- उपयुक्त शिक्षण विधि, तकनीक, साधन तथा प्रतिमान आदि को कक्षा में प्रयोग में लाने के लिए वांछित कौशल और दक्षताओं को विकसित करना।
- कक्षागत शिक्षण सम्बन्धी समस्याओं को हल करने के लिए क्रियात्मक अनुसंधान का सहारा लेते हुए उनके समाधान का प्रयास करना।
- राष्ट्रीय एकता एवं अन्तर्राष्ट्रीय सद्भावना आदि को विकसित करने के लिए उपयुक्त अनुभूति एवं अभिवृत्तियों का विकास करने के लिए प्रयास करना आदि प्रमुख सामान्य उद्देश्य है, जबकि विभिन्न स्तरों के लिए (जैसे पूर्व प्राथमिक, प्राथमिक, माध्यमिक तथा महाविद्यालयीय) विशिष्ट उद्देश्यों को भी निर्धारित करने के लिए प्रयास किया गया।

पाठ्यक्रम व्यवस्था

पाठ्यक्रम में सैद्धान्तिक और प्रायोगिक दोनों ही पक्षों को सम्मिलित करने के लिए प्रयास इस देश की पाठ्यक्रम व्यवस्था में किया गया है। सैद्धान्तिक पाठ्यक्रम के अन्तर्गत–शैक्षिक मनोविज्ञान, बाल–मनोविज्ञान, शिक्षण विधि एवं तकनीक, शैक्षिक समस्यायें एवं सुधार के उपाय, विद्यालय संगठन और प्रशासन आदि को रखा गया है, जबकि प्रायोगिक पक्ष में शिक्षणाभ्यास, आदि को स्थान दिया जाता है। प्राथमिक, माध्यमिक, विशिष्ट अध्यापक, कला तथा व्यवसायिक अध्यापक तथा उच्च शिक्षा से सम्बन्धित अध्यापकों के लिए यहाँ अलग–अलग पाठ्यक्रम निर्मित किया गया है। प्रशिक्षण कार्यक्रम की अवधि शारीरिक शिक्षा एवं गृह विज्ञान में तीन वर्ष कला एवं संगीत में चार वर्ष आदि है, जिसमें से किसी भी विषय में प्रवेश कोई भी अभ्यर्थी जिसने सामान्य शिक्षा प्रमाण पत्र प्राप्त किया हो, ले सकता है।

शिक्षक का स्वरूप

- प्राथमिक स्तरीय शिक्षक
- माध्यमिक स्तरीय शिक्षक
- विशिष्ट विषयों के अध्यापक
- अग्रिम शिक्षा हेतु अध्यापक
- अध्यापकीय सेवा
- अग्रशिष्य प्रणाली

संयुक्त राज्य अमेरिका में अध्यापक शिक्षा

यह एक अन्य प्रमुख विकसित देश है, जहां अध्यापकों की स्थिति अच्छी है। पहले की तुलना में आज अनेकानेक प्रशिक्षण महाविद्यालय स्थापित किये जाने के कारण (मैसाच्यूसैट्स–1839, इलिनायस–1857, आयोवा–1873, मिशीगन–1879, कोलम्बिया–1887 आदि) शिक्षा विभाग प्रगतिशील है। इन प्रशिक्षण संस्थाओं में प्रवेश हेतु अर्हताओं का निर्धारण भी क्रमशः किया गया। पहले जहाँ माध्यमिक स्तर पर दो वर्षीय अध्ययन को न्यूनतम योग्यता माना जाता था, वही पर बाद में प्राथमिक स्तर के लिए दो वर्षीय महाविद्यालीय शिक्षा के साथ अध्यापन आजीविकागत प्रशिक्षण को अनिवार्य माना जाता है। माध्यमिक स्तर पर अध्यापक हेतु स्नातकीय शैक्षिक योग्यता के साथ चार वर्षीय अध्यापक शिक्षा प्रमाण पत्र को आवश्यक माना जाता है। राज्यगत विभिन्नताओं के साथ ही प्रवेश हेतु उत्तम स्वास्थ्य, शैक्षिक योग्यता, चरित्र अभिलेख, अभिरूचि, व्यवहार आदि के बारे में जानने के लिए प्रवेश साक्षात्कार की व्यवस्था की जाती है।

नार्मल विद्यालय

1823 के पश्चात और प्रायः 37 वर्ष की समयावधि तक वैयक्तिक विद्वानों के स्तर पर (जैसे – सैमुएल आर0 हाल के द्वारा सर्वप्रथम 1823 में वरमोन्ट, कानवर्ड में) नार्मल स्कूलों की स्थापना अध्यापक शिक्षा के लिए की गयी। 1860 तक प्रायः 170 पब्लिक नार्मल स्कूल स्थापित किये गये, जहाँ एक वर्षीय अध्यापक शिक्षा कार्यक्रम का प्रबन्ध किया जाता था। जिला प्रारम्भिक विद्यालयों के लिए इन विद्यालयों में अध्यापक की तैयारी होती थी, जिसमें मूलभूत शिक्षण विषयों को दोहराया जाता था, जैसे – स्पेलिंग पठन तथा लेखन, भूगोल, गणित आदि। माध्यमिक विद्यालयीय शैक्षिक विषयों पर चर्चाएँ की जाती थी, जैसे–ज्यामिति, बीजगणित, दर्शन आदि। शारीरिक, मानसिक और नैतिक विकास के लिए कार्यक्रम, सामान्य विद्यालयीय विषयों के सिद्धान्त और शिक्षण विधि, विद्यालय, शासन कला, शिक्षणाभ्यास आदि।

अध्यापक प्रशिक्षण प्रणाली

गृह युद्ध के दौरान इस देश में शिक्षा के क्षेत्र में व्यापक परिवर्तन हुए। 1890 के बाद विद्यालय में प्रवेशार्थियों की संख्या प्रत्येक दशाब्दी में द्विगुणित होने के कारण और 1910 में यह संख्या दस लाख से अधिक होने के कारण गुणवत्ता सम्पन्न अध्यापक की आवश्यकता भी बढ़ गयी। प्रशिक्षणकाल एवं पाठ्यक्रम दोनों में परिवर्तन की जरूरत को देखते हुए नार्मल स्कूल को अपर्याप्त माना गया। इस हेतु विश्वविद्यालयों में शिक्षकीय प्रशिक्षण विभागों की स्थापना को महत्व दिया गया तथा 1857 में इलिनॉयस नार्मल विश्वविद्यालय की स्थापना के बाद 19 वीं0 सदी के अन्त तक 24 अध्यापक प्रशिक्षण महाविद्यालय एवं विश्वविद्यालय कार्य करने लगे। 1910 के बाद अध्यापक शिक्षा को अध्यापक प्रशिक्षण के स्थान पर देश में स्थान मिला। नार्मल स्कूलों के स्थान पर चार वर्षीय अध्यापकीय महाविद्यालय कार्य करने लगे। 1920 तक इनकी संख्या 45 हो गयी तथा 1948–49 में 218 अध्यापकीय महाविद्यालय के द्वारा कौशल परख अध्यापक प्रशिक्षण के स्थान पर मूलभूत शैक्षिक सिद्धान्त अवबोध प्रधान अध्यापक शिक्षा को व्यवहृत किया गया।

उद्देश्य

स्वाधीन संयुक्त राष्ट्रीय प्रजातान्त्रिक जीवन–पद्धति के अनुरूप अध्यापक शिक्षा को विकसित करना एक प्रभाव उद्देश्य माना गया। साथ ही कई अन्य सामान्य उद्देश्य भी निर्धारित किये गये जिनमें से कुछ प्रमुख निम्नलिखित है –

- छात्राध्यापकों/छात्राध्यापिकाओं के व्यक्तित्व के समुचित विकास के लिए मुक्त वातावरण का सृजन करना।
- शिक्षण अधिगम प्रक्रिया के बारे में सैद्धान्तिक एवं व्यवहारिक जागरूकता को विकसित करने के लिए प्रयास करना।
- प्रमुख शिक्षण विधि तकनीक एवं शिक्षण साधनों के सम्बन्ध में दक्षता एवं कुशलता को विकसित करना।
- दुरस्थ शिक्षा अध्यापक हेतु पृथक अध्यापक शिक्षा कार्यक्रम की व्यवस्था करना।
- प्रजातान्त्रिक शासन प्रणाली के परिपेक्ष्य में अनुभूतियों का विकास छात्राध्यापकों/ छात्राध्यापिकाओं में करना।
- अध्यापक शिक्षा कार्यक्रम को स्थानीय आवश्यकता के अनुसार व्यवस्थित करना आदि।

फ्रांस में अध्यापक शिक्षा

यूरोपीय शिक्षा प्रणाली का यह भाग माना जाता है और प्राथमिक, माध्यमिक तथा उच्च माध्यमिक तीनों ही स्तर पर अध्यापक शिक्षा की व्यवस्था फ्रांस में की जाती है। अध्यापक या टीचर प्राथमिक और प्राध्यापक या प्रोफेसर माध्यमिक एवं उच्च स्तर पर शिक्षण कार्य करते है। 1830 से औपचारिक अध्यापक शिक्षा कार्यक्रम को प्रारम्भ किया गया था। प्राथमिक विद्यालयीय अध्यापक हेतु प्राथमिक नार्मल (दीक्षा) विद्यालयों में दी जाती है। जिनमें से महिला अध्यापिकाओं के प्रशिक्षण के लिए कई विद्यालय अगल से खेले गये है। नार्मल विद्यालयों में प्रति सप्ताह 30 शिक्षण कालांश

होते है और रविवार के अलावा बृहस्पतिवार को अर्द्धअवकाश रहता है। शिक्षण सम्पादन हेतु 50 अर्द्ध दिवसों का उपयोग किया जाता है। शिक्षण अभ्यास में कोई कठिनाई नही होती है। पाठ्यक्रम में सामान्य विषय, जैसे–शैक्षिक मनोविज्ञान, समाजशास्त्र, दर्शनशास्त्र, विज्ञान, शरीरविज्ञान, प्राकृतिक विज्ञान, कृषि, चित्रकलां, संगीत, शारीरिक शिक्षा, भूगोल, इतिहास, गणित, फ्रेन्च भाषा, साहित्य एवं एक विदेशी भाषा को स्थान दिया जाता है। पाठ्यक्रम की अवधि प्रायः तीन वर्ष की होती है। जिनमें से प्रथम वर्ष में निरीक्षण द्वितीय वर्ष में शिक्षण दायित्व ग्रहण और तृतीय वर्ष में स्वतन्त्र ढंग से शिक्षण तथा कक्षा नियन्त्रण का अभ्यास कराया जाता है। प्रत्येक वर्ष के अन्त में सत्रीय परीक्षा का आयोजन किया जाता है, जिनमें से प्रथम वर्ष में भाषा, समाज विज्ञान, आदि के विषयों को लिया जाता है। द्वितीय वर्ष में शेष विषयों में परीक्षा ली जाती है तथा अन्तिम वर्ष में मौखिक तथा शिक्षण अभ्यासगत परीक्षाओं का आयोजन किया जाता है। शिक्षण कला या अन्य कला, संगीत शारीरिक शिक्षा, कृषि, गृह अर्थशास्त्र आदि में से किसी एक में भी परीक्षा ली जाती है।

ब्रिटिश काल में अध्यापक शिक्षा

सर्वप्रथम बम्बई, मद्रास, कलकत्ता की शिक्षा परिषदों ने अध्यापकों की शिक्षा की आवश्यकता को अनुभव किया और कुछ समय के प्रशिक्षण केन्द्रों की स्थापना की। सन् 1945 में वुड की घोषणा पत्र तथा लार्ड स्टेसल ने सन् 1859 में प्रशिक्षण विद्यालयों की स्थापना के आदेश दिये। सन् 1882 में भारतीय शिक्षा आयोग ने प्रारम्भिक माध्यमिक विद्यालयों के अध्यापकों के प्रशिक्षण हेतु अत्यन्त महत्वपूर्ण सुझाव दिये। 19वी0 शताब्दी में सम्पूर्ण देश में 6 प्रशिक्षण विधालयों की स्थापना की गयी। लार्ड कर्जन ने सन् 1904 में अध्यापकों की शिक्षा की विभिन्न समस्याओं सम्बन्धी सुझाव दिये। "भारतीय शिक्षा सेवा विभाग" के लिए योग्य एवं अनुभवी अध्यापकों के प्रशिक्षण का प्रबन्ध किया।

स्वतन्त्र भारत में अध्यापक शिक्षण सन् 1948 में शिक्षक–प्रशिक्षण पर प्रमुख सुझाव निम्नलिखित है–

- अध्यापन अभ्यास पर बल दिया जाये।
- अच्छे व उपयुक्त विद्यालयों में शिक्षण अभ्यास पर बल दिया जाये।
- अखिल भारतीय स्तर पर मौलिक अनुसंधान पर बल दिया जाये।

आज गुणवत्ता की चर्चा शिक्षा के क्षेत्र में, विशेष रूप से की जा रही है। इसी प्रकरण पर विचार गोष्ठियों का आयोजन किया जा रहा है। "शिक्षा अनुसंधान" की गुणवत्ता पर राष्ट्रीय स्तर बडौदा, दिल्ली तथा इलाहाबाद विश्वविद्यालय में विचार गोष्ठियों का आयोजन किया गया। इसी प्रकार, अध्यापक शिक्षा के प्रवक्ताओं की भागीदारी रहती है। अध्यापक शिक्षा की गुणवत्ता का विवेचन कक्षा से बाहरी पक्षों पर किया जाता है। कक्षा के आन्तरिक पक्षों को महत्व नही दिया जाता है। जबकि कोठारी आयोग ने पूर्व में ही यह कथन दिया है कि–**"भारत के भाग्य का निर्माण उसकी कक्षाओं में होता है।"** स्वतंत्रता के बाद से अध्यापक शिक्षा संस्थानों का विकास संख्यात्मक हुआ है, परन्तु प्रभावशाली शिक्षक तैयार नही हो पा रहे हैं। इसलिए अवश्यकता इस बात की है कि अध्यापक शिक्षा में गुणवत्ता का विकास किया जाये। इसी उद्देश्य के घ्यान में रखते हुए राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद (NCTE) की स्थापना की गयी, जिसमें राष्ट्रीय स्तर पर अध्यापक शिक्षा में गुणवत्ता का विकास किया जाये, परन्तु यह परिषद इस दिशा में कोई ठोस कदम नहीं उठा पा रही है। जहॉ हम एक ओर अध्यापक शिक्षा में गुणात्मक सुधार की बात कर रहे है। वही (NCTE) ने शिक्षक प्रशिक्षण संस्थाओं में नियुक्त होने वाले शिक्षकों की योग्यता एवं मानदण्ड को घटा दिया है। यू.जी.सी. के मानकों को ताक पर रखकर मनमाने ढग से शिक्षकों की योग्यता

एम.ए. एवं बी.एड. 55 प्रतिशत रखा हैं जब हम इस प्रकार अधकचरे ज्ञान वाले व्यक्तियों को शिक्षण प्रशिक्षण संस्थाओं में नियुक्ति देने लगेंगे तो हमारा यह कहना कि अध्यापक शिक्षा में गुणवत्ता लाने की बात एकदम खोखली होकर रह जायेगी। (NCTE) राष्ट्रीय स्तर की संस्था है तो इसे इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि किसी भी व्यवसायिक प्रशिक्षण में गुणवत्ता लाने के लिए मानकों घटाने के बजाय अधिक योग्य एवं अनुभवी प्रशिक्षकों को नियुक्ति करने की आवश्यकता है। इस प्रकरण को स्पष्ट रूप से जानने के लिए मुख्य रूप से निम्नलिखित शब्दों को जानना अत्यन्त आवश्यक है

गुणवत्ता

गुणवत्ता शब्द उद्योग से लिया गया है। इसका अर्थ उत्पादन से होता है। गुणवत्ता उद्योग में लाई जाती है। उसका आँकलन उपभोक्ता द्वारा किया जाता है। इसी प्रकार प्रभावशाली अध्यापक प्रशिक्षण संस्थाये तैयार करती है तथा उनकी प्रभावशीलता का आँकलन विद्यालय करते हैं।

शिक्षक

अध्यापक शब्द अधिक व्यापक है तथा इसकी समाज में अहम भूमिका है। राष्ट्र तथा समाज के सन्दर्भ में अध्यापक को गुरू से सम्बोधित किया जाता है तथा गुरू की महिमा का विशद विवेचन किया गया है। परन्तु यहॉ अध्यापक शिक्षा के सन्दर्भ में अध्यापक का स्थान विशिष्ट सुनिश्चित किया गया है। प्रशिक्षण के कार्यक्रमों के सम्पादन प्रभावशाली ढंग से करने वाला व्यक्ति ही अध्यापक है। इस सम्बन्ध में मेरा अपना विचार है कि वास्तव में अध्यापक वही है, जो छात्रों में अभिरूचि उत्पन्न करे। अध्यापक का वास्तविक अर्थ शिक्षण–क्रियाओं तथा कार्यक्रमों का सम्पादन प्रभावशाली ढंग से करने वाला व्यक्ति।

शिक्षा

शिक्षा शब्द का अर्थ करना कठिन है, क्योंकि शिक्षा शब्द को अनेक अर्थो में प्रयुक्त किया जाता है। शिक्षक प्रशिक्षक शिक्षण करता है। शिक्षण का प्रशिक्षण देता है तथा अवलोकन करके शिक्षण की क्रियाओं को सुधार हेतु सुझाव भी देता है। इस प्रकार यहॉ शिक्षा का अर्थ अध्यापकों को प्रशिक्षण देना है। इस प्रशिक्षण में शिक्षण क्रियाओं एवं कौशल का विकास करना है, जिससे कक्षा में पाठ्यवस्तु को प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत कर सके।

अध्यापक शिक्षा की गुणवत्ता का सीधा अर्थ होता है। शिक्षण प्रक्रिया को प्रभावशाली बनाना। यहॉ शिक्षण का भाव कक्षा–शिक्षण से है। कक्षा शिक्षण से बाहर गुणवत्ता की चर्चा करना निरर्थक है। यदि अनुभवी शिक्षक प्रशिक्षणों से ज्ञात किया जाये कि कक्षा निरीक्षण या छात्र शिक्षण में आप क्या देखते हैं? और क्या आख्या देते है ? वास्तव में पाठ्यक्रम प्रस्तुतीकरण और कक्षा में अनुदेशनात्मक प्रकिया पर विरला प्रशिक्षक ही सुझाव तथा आख्या देता है। जबकि शिक्षक प्रशिक्षक को कक्षा अवलोकन के साथ चिन्तन की आवश्यकता अधिक है। यदि प्रशिक्षक ऐसा करता है तो निश्चित रूप से अपने छात्राध्यापकों/छात्राध्यापिकाओं में शिक्षण कुशलता व दक्षता निश्चित रूप से विकसित कर सकता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूचीः–

- भारत में शिक्षा का विकास, गुरूसरन दास त्यागी, अग्रवाल पब्लिकेशन्स, पाँचवाँ संस्करण 2010/2011 ।
- तुलनात्मक शिक्षा, निकोलस हैंस, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी।
- अध्यापक व्यवहार, डा0 एम0 श्री रावत, अग्रवाल पब्लिकेशन्स आगरा–2, द्वितीय संस्करण 2009

- अध्यापक शिक्षा, शिरीषपाल सिंह, ए0पी0एच0 पब्लिशिंग कारपोरेशन 4435–36/7, अंसारी रोड दरियागंज, नई दिल्ली–110002, संस्करण 2009 ।
- तुलनात्मक शिक्षा, भाई येागेन्द्र जीत, विनोद पुस्तक मन्दिर आगरा, प्रथम संस्करण 1972
- शिक्षा के समाजशास्त्रीय सिद्धान्त, प्रो0 रमन बिहारीलाल, रस्तोगी पब्लिकेशन, गंगोत्री शिवाजी रोड, मेरठ,, सत्रवहाँ संस्करण 2010–11।
- भारतीय शिक्षा का इतिहास एवं समस्यायें, प्रो0 रमन बिहारी लाल, कृष्णकान्त शर्मा, विनय रखेजा c/o आर लाल बुक डिपो निकट गवर्नमेण्ट इण्टर कॉलेज, बेगम ब्रिज रोड मेरठ, संशोधित एवं परिवर्द्धित संस्करण 2012 ।
- शैक्षिक निबन्ध, डा0 राम शकल पाण्डेय, विनोद पुस्तक मन्दिर आगरा, तृ तीय संशोधित संस्करण 2010 ।
- तुलनात्मक शिक्षा, डा0 सरयू प्रसाद चौबे, अग्रवाल पब्लिकेशन्स आगरा।
- भारत में शिक्षा का विकास, प्रो0 सुरेश भटनागर एवं0 डा0 संजय कुमार, सूर्या पब्लिकेशन्स निकट राजकीय इण्टर कॉलेज मेरठ, प्रथम संस्करण 2002
- अध्यापक शिक्षा, डा0 जी0सी0 भट्टाचार्य, अग्रवाल पब्लिकेशन्स छठा संस्करण 2011
- भारत में शिक्षा का विकास, डा0 जी0 एस0 वर्मा, इण्टर नेशनल पब्लिशिंग हाऊस मेरठ, नवीन संस्करण 2008